नैतिकता की मान्यता BA Part 2 paper 3

Dr. Arti Kumari
Asso. Prof.
Deptt. Of Philosophy
B.N. College T. M.B.U
bhagalpur

प्रत्येक शास्त्र की कुछ आवश्यक मान्यताएं होती हैं जिन्हें सत्य मानकर उस शास्त्र के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है। इन्हीं मान्यताओं के आधार पर ही उस शास्त्र की नींव खड़ी होती है। इसी कारण किसी शास्त्र की मान्यता को उस शास्त्र की आवश्यक शर्त समझा जाता है। इन्हें मान्यता कहने का अर्थ है, इसे माने बिना आगे बढ़ा ही नहीं जा सकता। शास्त्र के अन्य सिद्धान्तों की परीक्षा होती है, परन्तु मान्यताओं की परीक्षा नहीं होती। इन्हें सत्य मान लिया जाता है। इसी प्रकार नीतिशास्त्र भी एक शास्त्र है। अतः यह अपने नैतिक नियमों का प्रतिपादन करने के पहले कुछ शर्तों या मान्यताओं को सत्य मान लेता है। इन्हें ही नैतिकता की आवश्यक मान्यताएं कहते हैं।

नैतिकता की आवश्यक मान्यताएं दो प्रकार की होती हैं—

(1) प्राथमिक मान्यताएं (Primary Postulates)
(2) गौण मान्यताएं (Secondary Postulates)

प्राथमिक मान्यताएं उन मान्यताओं को कहा जाता है जिन्हें प्रत्येक नीतिशास्त्री स्वीकार करते हैं। ये तीन प्रकार की होती हैं—

(1) व्यक्ति (Person)
(2) विवेक (Reason)
(3) आत्मनियंत्रण या इच्छा स्वातंत्र्य (Self determination)

गौण मान्यताएं कांट द्वारा स्वीकृत मान्यताएं हैं। चूंकि कांट ने इसे मान्यताओं के रूप में स्वीकार किया है इसी कारण इसे गौण मान्यता के रूप में स्वीकार किया गया है। ये तीन प्रकार की होती हैं—

(1) आत्मा की अमरता।

(3) इच्छा स्वातंत्र्य (Freedom of will)

प्रामाणिक मान्यताएँ —

(1) व्यक्तित्व — साधारणतः व्यक्तित्व का अर्थ होता है जिसमें कुछ आकृति और प्रकृति हो। जैसे, किसी व्यक्ति को देखकर कहना कि अमुक व्यक्ति का व्यक्तित्व बड़ा ही भव्य है। मनोविज्ञान में भी इसे परिभाषित करते हुए कहा गया है कि व्यक्तित्व वह है जिसमें शारीरिक और मानसिक गुण दोनों ~~विद्यमान~~ ~~हैं~~ विद्यमान हैं। व्यक्ति में भौतिक या शारीरिक गुण जैसे वह देखने में सुन्दर, आकर्षक हो परन्तु उसका चरित्र अच्छा न होकर बुरा हो तो ऐसे में कहा जाता है कि उस व्यक्ति का व्यक्तित्व अच्छा नहीं है। अर्थात व्यक्तित्व के लिए शारीरिक और मानसिक दोनों गुणों का विद्यमान होना आवश्यक है।

नीतिशास्त्र मनोविज्ञान से भिन्न व्यक्तित्व को ~~कोई~~ विशेष अर्थ में लेता है। इसके अनुसार व्यक्तित्व का अर्थ है विवेक सम्पन्न होना। विवेकशीलता का अर्थ है कि व्यक्ति में सत्, असत्, उचित-अनुचित, शुभ-अशुभ, भले-बुरे इत्यादि को पृथक करने की क्षमता होनी चाहिए। पशु भी क्रियाशील होते हैं परन्तु उनके शुभ-अशुभ, उचित-अनुचित का ज्ञान नहीं होता जिस कारण उनकी क्रिया प्रवृत्ति के कारण होती है, विवेक के द्वारा नहीं। मनुष्य और पशु में भिन्नता उनके विवेक के आधार पर की जाती है। पशु किसी कर्म के प्रयोजन और परिणाम को जाने बिना अपने कार्यों को सम्पादित करता है परन्तु मनुष्य अपने

कर्ता को उत्तरदायी होता। ... को ही नैतिक निर्णय का विषय माना गया है जिससे व्यक्ति का अभिप्राय अभिव्यक्त होता है। ऐच्छिक कर्म का सम्पादन एक विवेकशील व्यक्ति ही कर सकता है। अचेतन और पशु जिनमें विवेक का अभाव होता है, ऐच्छिक कर्मों के सम्पादन में असमर्थ हैं। इस तरह स्पष्ट है कि नीतिशास्त्र में कर्ता का स्वतंत्र होना आवश्यक है। पाणिनि ने इसे व्यक्त करते हुए कहा है— 'स्वतंत्रः कर्ता'। अर्थात् स्वतंत्र होने का अर्थ है बाह्य दबाव या प्रलोभन के बिना सोच-समझकर किसी कार्य के प्रयोजन एवं परिणाम के ऊपर विचार करे।

दार्शनिक दृष्टिकोण से व्यक्ति दो प्रकार का होता है—

1. क्षणिक व्यक्ति,
2. सनातन व्यक्ति

क्षणिक व्यक्ति — बौद्ध दार्शनिकों का मानना है कि पंच स्कन्ध से निर्मित व्यक्ति का अस्तित्व क्षणिक है क्योंकि ये पंचस्कन्ध - रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान के द्वारा शारीरिक और मानसिक अवस्थाओं का संयोग मात्र है। व्यक्ति नाम और रूप से निर्मित भौतिक और मानसिक अवस्था है। चूंकि पंचस्कन्ध क्षणिक है, अतः व्यक्ति भी क्षणिक है। इसका कोई सनातन स्वरूप नहीं है। इसके विरोध में दार्शनिकों का मानना है कि यदि व्यक्ति क्षणिक है तो उसके द्वारा सम्पादित कर्म का फल भी क्षणिक होगा। इस तरह व्यक्ति को क्षणिक मानने से

सबसे बलवती इच्छा (~~will~~) अर्थात् संकल्प (Will) का प्रयोग करता है जिसके साथ ही वह अपनी इन इच्छाओं में उचित-अनुचित, शुभ-अशुभ को ध्यान में रखते हुए चुनाव करता है जिससे उसकी इच्छा अन्य इच्छा से विपरीत संकल्प का रूप धारण करती है। इन विकल्पों का चयन विवेक के द्वारा होता है। मनुष्य जब अपनी इच्छा से कार्यों का संपादन करता है तो उसमें उत्तरदायित्व की भावना भी प्रकट होती है जिससे वह अपने द्वारा किए गए कर्मों के अच्छे या बुरे परिणाम का उत्तरदायी होता है। बच्चों, पागलों व पशुओं इत्यादि द्वारा किए गए कर्मों पर नैतिक निर्णय नहीं दिया जा सकता परन्तु अपने freedom of will का प्रयोग बुद्धि के द्वारा करता है और कर्मों के उचित या अनुचित परिणाम के प्रति उत्तरदायी होता है। इस कारण उसके कार्यों पर नैतिक निर्णय देना संभव है। विश्लेषण से स्पष्ट है कि ऐच्छिक कर्म ~~के~~ के कई अंग हैं —

(1) अनेक प्रकार की इच्छाओं की उत्पत्ति
(2) इच्छाओं में परस्पर संघर्ष
(3) इच्छाओं, प्रयोजन और परिणाम का विवेचन
(4) इच्छा के अनुसार कर्म का निर्णय

उपर्युक्त सभी का संकल्प-विकल्प का आधार विवेक है। अतः विवेक नैतिकता की आवश्यक

ऐसे ही उत्तरदायित्व का निर्णय होता है। जब व्यक्ति किसी कार्य का उत्तरदायित्व लेता है तभी उसके कार्यों पर उचित या अनुचित का निर्णय होता है। इस प्रकार संकल्प की स्वतंत्रता को नैतिक निर्णय की आवश्यक मान्यता के रूप में स्वीकार किया गया है। ~~मार्टिन्यू~~ मार्टिन्यू ने संकल्प की स्वतंत्रता की महत्ता को स्वीकार करते हुए कहा है —

"Either freedom of will is a fact or moral judgment a dillusion".

~~अर्थात~~ मार्टिन्यू के कथन का अर्थ यह है कि यदि हम संकल्प स्वतंत्रता को नहीं स्वीकारते हैं तो नैतिक निर्णय एक भ्रम हो जाएगा। यदि संकल्प स्वतंत्रता को स्वीकार न किया जाए तो नैतिक निर्णय किस पर दिया जाएगा? क्योंकि नैतिक निर्णय का आधार ही संकल्प स्वातंत्र्य है। बिना आधार के आधेय नहीं हो सकता। व्यक्ति जब तक अपने कर्मों का उत्तरदायित्व नहीं लेगा, तो किस पर नैतिक निर्णय दिया जाएगा। कर्मों के औचित्य का आधार ही नहीं बचेगा। किसी दूसरे के कर्म पर "किसी दूसरे का नैतिक निर्णय नहीं दिया जा सकता। जैसे बच्चों, पागल, दिवालिया ~~बिना~~ अथवा बिना स्वतंत्र इच्छा के बाह्य दबाव में किए गए कर्म को नैतिक निर्णय के अन्तर्गत नहीं लाया जा सकता और न ही उसपर उनके कर्मों के औचित्य का निर्धारण किया जा सकता। जब व्यक्ति

उसे इसके कर्म के अनुरूप भूमिकायें दे दिया
जाता है।

गौण मान्यताएं –

(1) ~~आत्मा की अमरता~~ – कांट द्वारा प्रतिपादित गौण मान्यताओं ~~जिन्हें~~ को तर्क बुद्धि द्वारा सत्य ज्ञान नहीं प्राप्त किया जा सकता। इन्हें केवल आस्था द्वारा स्वीकार किया जा सकता है। परन्तु कांट इन्हें नैतिकता के लिए अनिवार्य शर्त मानते हैं। ये अनिवार्य मान्यताएं हैं-

(i) आत्मा की अमरता – कांट ने आत्मा की अमरता को ~~आ~~ नैतिकता की आधारभूत मान्यता के रूप में स्वीकार किया है। आत्मा की अमरता को नैतिक पूर्णता के लिए मानना आवश्यक है। नैतिक पूर्णता का अर्थ है निरपेक्ष आदेश के अनुसार केवल कर्तव्य भावना से प्रेरित होकर निरंतर कर्म करना। कांट का मानना है कि मनुष्य केवल एक जीवन में नैतिक पूर्णता को नहीं प्राप्त कर सकता। अपनी भावनाओं, आकांक्षाओं इत्यादि पर विजय प्राप्त करने के लिए उसे अनेक जन्म लेकर निरंतर प्रयास करने की आवश्यकता है और यह तभी सम्भव हो सकता है जब आत्मा की अमरता को स्वीकार किया जाए। तभी मनुष्य अनेक जीवन प्राप्त कर सकता है

(2) ईश्वर का अस्तित्व – कांट ईश्वर की सत्ता को मानते हैं परन्तु ईश्वर को नैतिक नियमों का निर्माता

① जो व्यक्ति केवल कर्तव्य के लिए कर्म करता है उसमें वह आनंद को प्राप्त करता है। कांट का नैतिक सिद्धान्त भी है कर्तव्य कर्तव्य के लिए (Duty for duty sake)। प्रायः यह देखने को मिलता है कि कर्तव्य का पालन करनेवाले व्यक्ति को आनन्द की प्राप्ति नहीं होती। ऐसी दशा में सर्वशक्तिमान ईश्वर को मानना आवश्यक हो जाता है जो व्यक्ति के कर्मों का उपयुक्त विश्लेषण कर उसे आनन्द प्रदान करने में समर्थ हो।

② कांट का अभिमत है कि व्यक्ति के कर्मों का फल प्रदान करने के लिए ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि वह कर्मफलदाता के रूप में दुराचारी को दुःख एवं सदाचारी को आनंद प्रदान करता है।

③ ईश्वर सर्वगुणसम्पन्न है जबकि इसके विपरीत मनुष्य सीमित, अनित्य एवं परिवर्तनशील है। इसकारण मनुष्य को पूर्ण शुभ, सद्गुण तथा आनंद अर्थात् सत् चित् आनन्द का आधार नहीं माना जा सकता। सच्चिदानन्द के आधार के रूप में सर्वगुणसम्पन्न, नित्य, अविकारी, अपरिवर्तनशील ईश्वर को मानना आवश्यक है।

इच्छा स्वातंत्र्य या विकल्प की स्वतंत्रता (Freedom of will)

कांट के अनुसार नैतिक नियम आत्म प्रेरित होते हैं। अगर इसपर किसी बाह्य प्रभाव को स्वीकार कर लिया जाए तो उसे नैतिकता नहीं कह

का संपादन करता है तो उसके लिए उसे नैतिक रूप से उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। कांट ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा है — 'मुझे करना चाहिए अतः मैं कर सकता हूँ' (I ought to do therefore I can do it.) इस तरह कांट नैतिकता के लिए बाह्य आरोपित नियम को स्वीकार नहीं करते हैं बल्कि संकल्प-स्वातंत्र्य द्वारा किए गए कार्य को ही नैतिक निर्णय का विषय मानते हैं जिसके लिए संकल्प ऐसे नियमों से शासित होता है जिसका विधान वह स्वयं करता है। अतः संकल्प केवल आत्म-प्रेरित नियमों पर आधारित है।

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर यह स्पष्ट है कि नैतिक निर्णय के लिए कुछ आवश्यक शर्तों को मानना नितांत आवश्यक है। नैतिक मान्यताओं को सत्य मानकर ही नैतिक निर्णय का विवेचन का सकते हैं। उसके आधार पर ही मनुष्य के कर्मों के औचित्य का निर्धारण किया जा सकता है।